मथरा दास की नजरों में –
सुखदेव, भगत सिंह व भगवती चरण

उन दिनों मैं (मथरा दास) लाहौर में रह रहा था और मुझे टेक्नीकल इंस्टीट्यूट में दाखिल करवाने के बाद भाई साहब ने होस्टल छोड़ दिया था, और हम दोनों किराए के मकान में रहने लगे थे, जहां भगवती 'भाई' किसी भी समय हमारे यहाँ आ धमकते थे, भगत सिंह भैया की तो रोज ही बैठकें होती थीं, ये तीनों साथी 'तिकड़ी' करके मशहूर थे।

दिसम्बर 1927 का कोई दिन (शायद 20 दिसम्बर), सवेर का समय, मैं धीरे-धीरे कुछ सोचता हुआ डायमंड जुबली टेक्नीकल इंस्टीट्यूट को जा रहा था कि तभी चिल्लाता हुआ एक फेरीवाला (हॉकर) वहाँ से गुजरा – 'काकोरी केस के क्रान्तिकारियों को फाँसी।'

हॉकर आवाज लगाता हुआ तो दूर निकल गया, लेकिन मेरे कदम वहीं थम गए। दिल जोर-जोर से धड़कने लगा, मन एक दम उदास हो गया और आँखें भीग आईं। मैंने सोचा कि अब किसी भी तरह पढ़ाई में मन नहीं लगेगा, देश पर मर-मिटने वाले काकोरी के परवाने बार-बार मस्तिष्क में उथल-पुथल मचाएँगे, आज मैं इंस्टीट्यूट नहीं जाऊँगा, दिन भर मौन रहकर शोक मनाऊँगा, मैंने तय किया और उल्टे पैरों लौट पड़ा।

भरा मन लिए धीरे-धीरे पांव घसीटते सीढ़ियाँ चढ़ते हुए ऊपर आ गया, बैठक वाला कमरा खुला हुआ था, जमीन पर दरी बिछी थी, जहां भाईसाहब सुखदेव, भगत सिंह और भगवती चरण बैठे थे, एक क्षण भर रुका और उन्हें देखता रहा।

भाई जी ने गर्दन उठाई और बोले, "मथरा, तू तो इंस्टीट्यूट गया था, लौट काहे को आया...?"

"सारा देश तो ज़ारो-ज़ार रो रहा है भाई जी। सभी काम छोड़कर बैठे हुए हैं, फिर मैं कैसे पढ़ाई करता!" मैं लड़खड़ाते स्वर में बोला।

"तू छोड़ इन बातों को और अपना काम देख। हम ही बहुत हैं गम उठाने के लिए।" उत्तेजित होते हुए उन्होंने कहा।

तब मैं समझा कि वे मेरे क्लास छोड़ आने से नाराज हैं और हमेशा की तरह उन्हें मेरी पढ़ाई की रहती चिन्ता है। मैं कुछ बोला नहीं और चुपचाप अपने कमरे में चादर ओढ़कर सो गया था। अगर मैंने उनके इस कथन को गंभीरता से लिया होता कि गम उठाने के लिए हम ही बहुत हैं, तो शायद बहुत कुछ समझ लिया होता!

दोपहर तक मैं बिस्तर में पड़ा-पड़ा करवटें बदलता रहा, तेज भूख लगने पर उठा और अपने कमरे से बाहर आया तो देखा कि बैठक के कमरे में तीनों दोस्त उसी तरह गुमसुम से बैठें हैं और अखबार के पृष्ठ आस-पास बिखरे पड़े हैं।

"खाना खाने नहीं चलेंगे?" मैंने भाई जी से पूछा।

"नहीं, तू चला जा।"

"आप कहें तो नीचे वाले होटल से आपके लिए कुछ ला दूं?"

"नहीं, बोल जो दिया न कि तू जा।" उत्तेजित होकर वे बोले।

मैंने सोचा, उनकी नाराजगी अभी दूर नहीं हुई चुपचाप सीढ़ियां उतरकर साइकिल उठाई और मोहनलाल रोड के मोड़ पर स्थित साथी रामकिशन के होटल में चला गया। लेकिन वहां हर रोज की तरह आज भीड़ नहीं थी। जितने भी लोग थे वे ऐसे ही बैठे थे। खाने की जगह चाय या पानी ही चल रहा था, काउंटर पर साथी रामकिशन भी मुँह लटकाए बैठे थे, उनकी आँखों में पीड़ा के बादल छाए हुए थे। गहरे शोक तथा असीम गम में लोग किस तरह एकजुट हो जाते हैं, यह उस दिन मैंने जाना। पं. रामप्रसाद बिस्मिल, अशफाकउल्ला और रोशन सिंह 19 दिसम्बर, 1927 को तथा राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी 17 दिसम्बर, 1927 को फाँसी पर लटका दिए गए थे, यही गम था सबके भीतर

और सभी एकजुट होकर उनका शोक मना रहे थे। वहां (घर में) सुखदेव, भगत सिंह और भगवती चरण और यहाँ साथी रामकिशन तथा जगह-जगह सब कोई। मुझे भूख बहुत तेज लगी थी, पर मैंने खाना नहीं खाया। साथी रामकिशन को भी कुछ कहना उचित नहीं समझा, बस एक गिलास पानी पीकर उन्हें नमस्कार कर साइकिल उठा चल दिया।

सुखदेव भाई, जब नेशनल कॉलेज के छात्र थे और शीशमहल होस्टल में सरदार झंडा सिंह उर्फ जसवन्त सिंह के साथ रहा करते थे तो मैं लायलपुर से कभी-कभी लाहौर आता तो भाईजी के साथ ही ठहरता और उनके साथ मैस में खाना खाया करता था।

उन दिनों छात्रों में मैजिक लैनटर्न (Magic Lantern) की धूम मची हुई थी। यह एक तरह का प्रोजेक्टर (Projector) होता था, जिस द्वारा स्लाइडें पर्दे (Screen) पर दिखाई जाती थीं व जिनके वृतांत की कमेंट्री (Commentary) भगवती चरण साथ-साथ बोलते जाते थे। कभी-कभी यह कार्य भगत सिंह भी करते थे। वे स्लाइडें होती अंग्रेजों के अत्याचारों का जीता-जागता नमूना कि किस तरह सत्याग्रहियों को घोड़ों की टापों से कुचला जा रहा था। बेतहाशा लाठी चार्ज की घटनाएँ, भीड़ में नीचे गिरते और कुचले जाते देश के लोग, घायलों को बेरहमी से घसीटती हुई पुलिस व अस्पताल ले जाए जाते अधमरे नौजवान, ऐसे भयानक और दिल हिला देने वाले दृश्यों की कमेंट्री जब भगवती भाई करते तो देखने व सुनने वाले तड़प उठते थे। डी.ए.वी. कॉलेज, गवर्नमेंट कॉलेज के छात्रों का समूह विचलित हो उठता, कोमल दिल वाले छात्र तो रो ही पड़ते और जोशीले नौजवान उत्तेजित होकर नारे लगाने लगते।

एक बार जब मैं लायलपुर से लाहौर आकर सुखदेव के साथ ठहरा तब उन्होंने ब्राडला हॉल के खुले मैदान में मुझे ले जाकर यह कार्यक्रम दिखाया। मुझे लगा कि अंग्रेज सरकार कितनी बौखलाई हुई है और देश क अनेक शहरों, कस्बों और गाँवों की इन सच्ची घटनाओं ने मेरे मन को दुख के अथाह सागर में डुबो कर रख दिया।

उस दिन भगवती चरण वोहरा से मैं पहली बार मिला था, आँखों पर चश्मा लगाए और कुर्ता-पजामा पहने एक लम्बे और सुडौल नौजवान मेरे सामने खड़े थे। उनके चेहरे से गम्भीरता और मासूमियत एक साथ टपक रही थी। कमेंट्री बोलते समय मैंने उन्हें सुना, उनकी बोली में मिठास और भाषा में सरलता थी, उन्हें जब मालूम हुआ कि मैं सुखदेव का छोटा भाई हूँ तो उन्होंने आगे बढ़कर तपाक से मुझे गले लगाया था। मझे अच्छी तरह याद है, उस दिन उन्होंने कहा था, "तुम पढ़ रहे हो तो खूब पढ़ो। आजादी के बाद देश को पढ़े-लिखे देशी लोगों की जरूरत होगी। यदि सभी आजादी की लड़ाई में शामिल हो गए तो बाद में हम क्या करेंगे?"

भाईजी के दोस्तों के आगे मैं कभी नहीं बोलता था, मैं उनका बेहद सम्मान करता था, इसलिए भगवती चरण की बात को भी चुपचाप सुन लिया बोला कुछ नहीं। वही महान भगवती भाई जब रावी के किनारे एक बम परीक्षण के दौरान 28 मई 1930 को शहीद हो गए तो मैं बहुत रोया। बार-बार मेरे मस्तिष्क में वही एक वाक्य गूँजता – "सभी आजादी की लड़ाई में शामिल हो गए तो बाद में हम क्या करेंगे।" आजादी का भी इन्तजार नहीं कर पाए भगवती भाई। वह भी नहीं देख पाए कि जिससे उन्होंने खूब पढ़ने को कहा था, वह इंजीनियर बन गया है। सुना है कि उनका बेटा शची भी इंजीनियर बन गया है।

इत्तफाक से उसी दिन ही लाहौर के सभी समाचार-पत्रों में एक सनसनीखेज खबर छपी थी कि कॉलेज की छात्राओं ने अपने होस्टल सुपरिंटेंडेंट को प्रार्थना पत्र लिखे थे कि लारेंस गार्डन से गुजरते समय मिलिट्री के अंग्रेज जवान उनसे अभद्र व्यवहार और छेड़छाड़ करते हैं और छात्राएँ उनसे बहुत तंग आ चुकी हैं, जो यह बड़ी लज्जा की बात है और इसे तुरन्त बन्द करवाया जाना चाहिए। मैंने भी यह समाचार पढ़ा था और मेरा मन भी बड़ा दुखी हो गया था।

मैंने सवेरे ही भाई सुखदेव जी से कहा था, "यह तो मिलिट्री अनुशासन के खिलाफ है। बिना परमिशन (Permission) के ये लोग पब्लिक प्लेस (Public Place) में कैसे घूमते रहते हैं?"

"वे अंग्रेज हैं, उन्हें इस बात का नशा है कि वे इस देश के शासक हैं।" उन्होंने व्यंग्य से हँसते हुए जवाब दिया।

"इनका नशा कैसे उतरेगा भाईजी?" मैं बोला था।

"तू अपना काम कर और देखता रह। तेरे को कितनी बार कहा है कि इन बातों में मगज मत खपाया कर।" कहते हुए साइकिल उठाकर कहीं चले गए थे।

उसी शाम भगवती भाई और भगत सिंह भैया आए, मैं अपनी पढ़ाई के नोट्स (Notes) तैयार कर रहा था।

"अरे मथरा, सुखदेव कहाँ गया?" भगत सिंह भैया ने पूछा।

"पता नहीं। सवेरे से गए हैं।" मैंने उत्तर दिया।

वे दोनों बैठक में चले गए और ऊँचे स्वर में उस दिन के समाचार पर बहस करते रहे। भाईजी आए तो उनमें कुछ खुसर-पुसर होने लगी। थोड़ी देर बाद तीनों कही चले गए।

चौथे दिन के अखबार एक और सनसनीखेज समाचार से भरे हुए थे कि रात के समय कुछ अनजान नौजवानों ने मिलिट्री के उन अंग्रेज सिपाहियों को मार-मारकर अधमरा कर दिया था और वे लारेंस गार्डन की झाड़ियों में बेहोश पड़े हुए थे। पुलिस ने उन्हें म्यू (Mayo) अस्पताल में भरती कराया जहां डॉक्टरों ने रिपोर्ट में पाया कि वे शराब के नशे में धुत थे। मिलिट्री के उच्चाधिकारी ने बड़ी कोशिश की कि डॉक्टरों की रिपोर्ट और पुलिस की कार्रवाई दबा दी जाए, पर ऐसा हो नहीं पाया।

मकान के नीचे हॉकर जोर-जोर से आवाज लगाकर अखबार बेच रहा था। भाई जी ने मुझे नीचे भेजकर अखबार मँगवाए और ऊँची-ऊँची पढ़ने लगे। फिर जोरदार ठहाका लगाकर बोले, "देखा मथरे, तू कहता था कि उनका नशा कैसे उतरेगा, उतर गया न। अब बोल?" मैं मुस्कराते हुए अपने कमरे में आ गया और उन अनजान नौजवानों की हिम्मत की दाद देने लगा।

रात फिर तिकड़ी की महफिल जमी। तीनों साथी इतने जोर से हँस रहे थे कि आवाजें मेरे कमरे तक चली आ रही थीं। उनकी बातों के अंश सुनकर मैं हैरान था और अति सन्तुष्ट भी। उन तीनों और उनके साथी देशराज ने ही रात के अँधेरे में अंग्रेज सिपाहियों को मारा पीटा था। मुझे यह भी सुनाई पड़ा कि चार दिन तक वे लारेंस गार्डन की झाड़ियों में छिपकर टोह लेते रहे थे। लाहौर के घरों और गलियों-मुहल्लों में यह चर्चा का प्रमुख विषय बन गया था, लोग उन अनजाने नवयुवकों की प्रशंसा कर रहे थे।

मुझे अपनी टेक्नीकल (Technical) पढ़ाई खत्म करके सेनेट्री डिपार्टमेंट में मैं असिस्टेंट इंजीनियर की पोस्ट पर अंडर-ट्रेनिंग नियुक्त होने पर मुझे साठ रुपये वेतन और चार रुपए साइकिल एलाउंस मिला था। पहला वेतन लेकर मैं खुशी-खुशी घर लौटा और रुपए श्रद्धापूर्वक भाईजी को दे दिए, जो उन्होंने अपनी जेब में डाल लिये और मुझे शाबाशी देकर जाने लगे तो इत्तेफाक से भगत सिंह भैया तब वहाँ मौजूद थे, उन्होंने कहा, "कुछ रुपए इसे भी दे दो, इसे भी तो जेब खर्च चाहिए। यार-दोस्तों के बीच खर्चा हो ही जाता है।" तब सुखदेव भाई ने चार रुपए दे दिए और चले गए। इसके बाद तो वह हमेशा मुझसे पैसे लेते रहे। मैं दूसरे शहर में ट्रांसफर हो गया तो खुद आकर ले जाते या मनीआर्डर से मँगवा लेते; भाईसाहब की गिरफ्तारी के बाद ही मुझे पता लग पाया कि वह मेरी कमाई के रुपये अपने क्रान्तिकारी कार्यों पर ही खर्च करत थे।

सरदार किशन सिंह ने भगत सिंह 'भैया' को बहुत समझा-बुझाकर लाहौर के पास अपने गाँव में एक डेयरी खुलवा दी। भैया रेहड़ी में दूध लादकर एक नौकर के साथ रोज लाहौर आया करते थे, जबकि उनका इस व्यवसाय में तनिक भी मन नहीं था, वह आज़ाद तबियत के नौजवान थे और उन्हें यह व्यवसाय तनिक भी रास नहीं आया। हालाकि दूसरी ओर उनके साथियों के बड़े मजे हो गए थे, खूब दूध और पेड़े की लस्सी पीना और बैठकर गप्पे हाँकना, आमदनी इस तरह खुर्द-बुर्द हो जाती। सरदार किशन सिंह के कुछ पल्ले न पड़ता।

रविवार का दिन था। मैं और भाईजी नहा-धोकर बाहर निकलने के लिए तैयार थे कि तभी डेयरी का नौकर हाँफता हुआ आया, और बोला कि घोड़ी के मुँह जोर गिरने से रेहड़ी उलटकर टूट गई और भैया को काफी चोटें आई हैं। सुखदेव भैया हड़बड़ाकर दौड़े। मैं भी पीछे चल दौड़ पड़ा। अनारकली बाजार में सामने से सरदार किशन सिंह आते हुए दीख गए। जब भाईजी ने पूछा तो बोले कि बचाव हो गया है, कोई हड्डी-पसली नहीं टूटी। पट्टी बँधवाकर चला गया। डेयरी का काम उसके बस का नहीं, किसी और काम में लगाऊँगा। इतना कहकर वे चले गए:

रात को बँधी हुई पट्टियों में मैंने भगत सिंह भैया को देखा तो वह हँस रहे थे, भाईजी से उन्होंने कहा, "चलो अच्छा हुआ, जान छूट गई।" और फिर जोर से ठहाका लगाकर हँस पड़े।

एक दिन मैं थका-माँदा घर आया, दरवाजा खुला पड़ा था। पहले तो मैंने सोचा कि भाईजी आ गए होंगे, लेकिन उनकी साइकिल वहाँ नहीं थी, मैं घबरा गया कि आज तो कोई ताला तोड़कर अन्दर घुस बैठा है। मैं चौकन्ना होकर धीरे-धीरे ऊपर गया तो क्या देखता हूँ कि बैठक के कमरे में एक अजनबी युवक गहरी नींद में सो रहा है। साँवला रंग, चेचक के दाग और गठीला शरीर, उसकी नाक से जोरदार खर्राटे निकल रहे थे। मैंने पहले उसे कभी नहीं देखा था, मैं झुँझलाया कि पता नहीं भाईजी के ये भाँति-भाँति के मित्र कहाँ-कहाँ से आ टपकते हैं, और उन पर वह इतना भरोसा रखते हैं कि सूने घर की चाबी तक दे देते हैं।

बहुत अरसे बाद जब चन्द्रशेखर आज़ाद शहीद हो गए, तो उनकी तस्वीरें अखबारों में छपीं, जिसको देखकर मैं चौंक पड़ा। अरे, ये तो यही नौजवान हैं जो हमारे घर की बैठक में सोए पड़े थे, लेकिन मैं भ्रम में था। एक बार आदरणीय बन्धुवर शिव वर्मा जी जब मेरे यहाँ हापुड़ आए। तब मैंने उन्हें यह किस्सा सुनाया तो उन्होंने मेरी भूल सुधारी कि यह युवक चन्द्रशेखर आज़ाद नहीं बल्कि कालीचरण थे।

15 अप्रैल 1929 को सुखदेव भैया बम फैक्टरी लाहौर से पकड़े गए और वह गिरफ्तार कर लिये गए। इससे पहला झटका यह लगा कि मुझे अपनी सरकारी नौकरी से हाथ धोना पड़ा और मैं माताजी को लेकर लायलपुर चला आया। कोई बीस-पच्चीस रोज की भाग-दौड़ के बाद हमें हाईकोर्ट से भाईजी से मुलाकात की अनुमति मिली। इससे पूर्व मैं दुर्गा 'भाभी' जी के घर गया, मैंने सोचा कि शायद वह कोई सन्देश पहुँचाना चाहे क्योंकि मुझे पता चल चुका था कि वह क्रान्तिकारियों से सम्पर्क बनाए हुए हैं।

ग्वाल मंडी में भगवती भाई का घर था, जहां मैं पहुँचा तो उनकी पत्नी साहिबा एकदम चौंक पड़ीं। अचानक उनके मुँह से निकला, "अरे सुखदेव तुम हवालात से कैसे भाग निकले?"

मैंने कहा, "मैं तो उनका छोटा भाई हूँ, रंग-रूप उनसे मिलता है।"

वह हँसने लगी, मुझे प्यार से बैठाया और बातें करती रहीं, सचमुच वह स्नेह और ममता की मूर्ति थीं। वह महान देशभक्त भगवतीचरण वोहरा की जीवन संगिनी थीं और मेरे लिए पूजनीय।

यह मेरी उनसे प्रथम भेंट थी। उसके बाद उसी दिन शाम को माताजी के साथ उनके यहाँ गया। फिर तो न जाने कितनी मुलाकातें हुईं, वहीं पर धन्वन्तरि, सुशीला 'दीदी' और शकुन्तला जी को करीब से देखने-जानने का अवसर भी मिला।